© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

अध्यात्मरामायण में वर्णित ब्रह्म, माया, जीव तथा जगत् का स्वरूप

दिनेश सरोज

शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग, इलाहाबाद

विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

अध्यात्मरामायण भक्तिपरक ग्रन्थ होते हुए भी दार्शनिक तत्त्वों का विवेचन करता है। अध्यात्मरामायण के अनुसार परब्रह्म अथवा ब्रह्म ही परमतत्त्व है। जैसा कि प्रायः दर्शन परमतत्त्व की सत्ता का वर्णन करता है। जगत्, सृष्टिक्रम जीव इत्यादि का पूर्णत्व परमतत्त्व में ही मिलता है। इसका वर्णन मुख्यतया दो दृष्टिकोण से किया गया है। प्रथम दृष्टिकोण सर्वातीत स्वरूप है। द्वितीय परमतत्त्व का सृष्टि से सम्बन्धित स्वरूप अर्थात् सर्वकारणात्मक स्वरूप है। सर्वातीत–स्वरूप की बात की जाय तो सृष्टि से पूर्व निरुपाधिक एवं निर्विकल्पक मात्र वह परमतत्त्व था।

''सृष्टेः प्रागेक एवासीर्निविकल्पोऽनुपाधिकः

त्वदाश्रया त्वद्विषया माया ते शक्तिरूप्यते।[1]

वह अचिन्त्यस्वरूप, आनन्दघन, उपाधिकृत दोषों से रहित तथा स्वयंप्रकाश स्वरूप है–

''ज्योति स्वभावे परमेश्वरे तथा''[2]

परमतत्त्व, अद्वितीय, सत्तामात्र मन एवं इन्द्रियों के अविषय, निर्मलशान्त, सर्वव्यापक, परिणामहीन तथा क्रियारहित है। यही सर्वातीत स्वरूप है।

सर्वकारणात्मक स्वरूप की बात की जाय तो यह वह स्वरूप है, जो सृष्टि से सम्बन्धित है अर्थात् सर्वत्र वर्णित है क्योंकि ब्रह्म के सर्वकारणात्मक स्वरूप से ही यह सर्वातीत अनुसन्धेय है। दोनों के अन्योन्याश्रित सम्बन्ध से ही जगत् की कार्य–कारण व्यवस्था सम्पादित होती है। वह अनिर्लिप्त सर्वातीत परमात्मा अपने सर्वकारणात्मक स्वरूप से सर्वगत, सब में अनुस्यूत तथा सर्वान्तर्यामी भी परिभाषित हुआ। वही विश्वातीत, परमतत्त्व चराचर भूत मात्र का कर्ता अनन्तजगत् सत्ता एक मात्र अभिन्न कारण भी प्रतिलक्षित हुआ। वह परमतत्त्व अपनी अनन्तशक्ति से एकत्व के साथ–साथ अनेकत्व में प्रकट होता है। इस नामरूपात्मक जगत् रचना से पूर्व केवल वह सत् रूप था। राम का आद्यब्रह्म स्वरूप 'अध्यात्मरामायण' में कैसा है? इसके स्पष्ट हो जाने पर ही यह निश्चित हो सकेगा कि अध्यात्मरामायण में परमतत्त्व का क्या स्वरूप है?

ग्रन्थ के मंगलाचरण में ही राम के ब्रह्मत्व का प्रतिपादन इस प्रकार हुआ है ''चिन्मय अविनाशी प्रभु ने पृथ्वी का भार उतारने के लिए सूर्यवंश में माया–मानव रूप में अवतार लिया और राक्षसों का विनाश करके पुनः अपने आद्य ब्रह्म

स्वरूप में लीन हो गये। राम का माया–मानव रूप में अवतार लेना सर्वकारणात्मक स्वरूप हुआ। जब वह ब्रह्मस्वरूप में लीन हुये तब उनका स्वरूप सर्वातीत का रहा।

''यः पृथ्वीभरवारणाय दिविजैः संप्रार्थितश्चिन्मयः।

संजातः पृथ्वीतले रविकुले मायामनुष्योऽव्ययः।।[3]

राम ही साक्षात ब्रह्म हैं। वे विश्व की उत्पत्ति, स्थिति और लय आदि के एकमात्र कारण हैं। वे माया के आश्रय हैं और माया से परे भी हैं। वे निर्मल एवं स्वयंप्रकाश या स्वयंज्योति स्वरूप हैं। जैसे मकड़ी अपने जालरूपी कार्य के सन्दर्भ में अपनी प्रधानता से निमित्त एवं अपने शरीर की दृष्टि से उपादान कारण होती है। वह अपना जाला बुनने में किसी अन्य वस्तुओं की अपेक्षा नहीं करती, ठीक वैसे ही ईश्वर सृष्टि के पूर्व अकेला ही बिना अन्य तत्त्व की सहायता से केवल अपनी माया शक्ति द्वारा सम्पूर्ण सृष्टि की रचना कर देता है। अतः जिस प्रकार मकड़ी अपने तन्तुरूप कार्य के लिए अभिन्न निमित्तोपादान कारण है, वैसे ही जगत् रूप कार्य के लिए राम अभिन्न निमित्तोपादान कारण हैं। यह माया राम की उपाधि है। इसी माया या अज्ञान से उपहित चैतन्य की दृष्टि से राम जगत् के निमित्त कारण और अपनी उपाधि माया से उपादान कारण हैं। राम चैतन्य स्वरूप हैं। चित्त का अर्थ है–ज्ञान–स्वरूप। राम जड़ नहीं हैं, वह चिन्मात्र हैं। चैतन्य उनका गुण नहीं है। बल्कि स्वरूप है। ''सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म'' इस श्रुति वाक्य से भी ज्ञान एवं ब्रह्म का ऐक्य ही कहा गया है। वह सर्व धर्मातीत है क्योंकि सभी धर्म प्रतीयमान एवं आरोपित होने के कारण मिथ्या है वे निर्मल तुरीय पद में स्थित हैं–

''सत्वादिगुणसंयुक्तस्तुर्य एवामलः सदा''[4]

वे प्राण नहीं हैं, वे मन नहीं हैं। वे शुद्ध चैतन्य हैं। वे शरीर में रहकर बुद्धि को प्रकाशित करते हैं। इसीलिए वही सबकी आत्मा है। राम आनन्द रूप हैं, निरतिशय सुखरूप हैं, आनन्द एवं राम में धर्मधर्मिभाव नहीं है। प्रत्युत ज्ञान के समान आनन्द भी राम का स्वरूप ही है। अध्यात्म रामायण में राम को आनन्दघन, निर्मल और अचिन्त्य कहा है। इस प्रकार ब्रह्म या राम सच्चिदानन्द स्वरूप हैं। यही सच्चिदानन्द राम अपनी माया शक्ति से उपहित होने पर भी अनेक रूपों में भासमान होते हैं। दार्शनिक तत्त्वों में परमतत्त्व के उपरान्त माया का दूसरा स्थान है। माया एवं ब्रह्म का उसी–प्रकार का सम्बन्ध है, जिस प्रकार जल का फेन समूह के साथ एवं अग्नि का धुएं के साथ है।

''यथाजले फेनजालं धूमो वह्नौ तथा त्वयि।

त्वदाधारा त्वद्विषया माया कार्यं सृजत्यहो।।[5]

माया का स्वरूप

अध्यात्मरामायण के रचना के अनुसार शरीरादि अनात्मपदार्थों में जो आत्मबुद्धि होती है, वही माया है। उसी के द्वारा इस जगत् की कल्पना हुई। माया ब्रह्म की ही शक्ति है जो सृष्टि के पूर्व ब्रह्म में ही आश्रित रहती है। इसी को अविद्या, संसृति, बनन भी कहते हैं–

''मूलप्रकृतिरित्येके प्राहुर्मायेति केचन।

अविद्या संसृतिर्बन्ध इत्यादि बहुधोच्यते।।''[6]

इस त्रिगुणात्मिका की दो शक्तियाँ हैं–(1) विक्षेप शक्ति (2) आवरणशक्ति

''रूपे द्वे निश्चिते पूर्व मायायाः कुलनन्दन।

विक्षेपावरणे तत्र प्रथमं कल्पयेज्जगत।।[7]

जगत्

अध्यात्म रामायण में वर्णित सृष्टिक्रम उपनिषदों में वर्णित सृष्टिक्रम से पूर्ण साम्य रखता है। यह सम्पूर्ण जगत् चराचर भगवद्स्वरूप है।

''भवान्नारायण साक्षाज्जगतामादिकृद्विभुः।

त्वत्स्वरूपमिदं सर्वं जगत्स्थावर जंगमम्।।

जीवात्मा

अध्यात्मरामायण अद्वैतवेदान्त का प्रतिपादन करता है। जिसमें जीवन का स्वरूप ''जीवति प्राणान् धारयति इति जीव'' इस व्युत्पत्ति के अनुसार जो जीता है, प्राणों को धारण करता है, वह जीव है। अध्यात्मरामायण में मायोपाधि में चैतन्य का प्रतिबिम्ब जीव है।

अध्यात्मरामायणकार कहते हैं–अविद्याजन्य देहादिसंघातों में प्रतिबिम्बित हुई चितिशक्ति ही लोक में जीव कहलाती है।

''अविद्याकृत देहादिसंघाते प्रतिबिम्बिता।

चिच्छक्तिर्जीवलोकेऽस्मिन् जीव इत्यभिधीयते।[8]

जीवात्मा का स्वरूप

जीव षड्भावविकारों से रहित होने के कारण निर्विकार है। जन्ममरण से रहित होने के कारण आदि एवं नित्य है। जीव न कहीं जाता है न स्थिर ही रहता है, क्योंकि वह सर्वव्यापी एवं अव्यय है। जीव अद्वितीय आकाश के समान निर्लेप, नित्य ज्ञानमय और शुद्ध है। आत्मा सबका आश्रय निरवच्छिन्न सृष्टि का हेतु देह, इन्द्रिय, मन, प्राण बुद्धि आदि से पृथक् तथा शुद्ध स्वयंप्रकाश अविकारी निराकार, चिन्मात्र, ज्योतिः स्वरूप, सबकी बुद्धि को प्रकाशित करने वाली, सच्चिदानन्द आनन्दरूप एवं बुद्धि की साक्षी है।[9] इन वर्णनों से स्पष्ट है कि जीवात्मा शरीर से भिन्न है यही बुद्धि की तीनों वृत्तियों का साक्षी है। यह आकाश के समान सर्वत्र व्याप्त है अतः सर्व–व्यापक है। सृष्टि का हेतु होने के कारण सबका आश्रय है। जगत् से विपरीत होने के कारण परिवर्तनशील जगत् के समक्ष नित्य एवं अविकारी कहा गया है।

परमात्मा एवं जीवात्मा में अन्तर

परब्रह्म की चिच्छक्ति ही आत्मा है। जब यह सर्वत्र परिपूर्ण है तब परमात्म स्वरूप है, परन्तु जब यही चिच्छक्ति बुद्धि में प्रतिबिम्बित हो तो देह से युक्त होती है। अतः वह जीवात्मा कहलाती है। ऐसा अध्यात्मरामायण में कहा गया है।[10]

यह आत्मा अद्वितीय होने के कारण अस"रूप और अजन्मा है। अध्यात्मरामायण के अनुसार परमात्मा एवं जीवात्मा की एकता जानने के लिए गुरुकृपा से 'तत्त्वमसि' इस महावाक्य के द्वारा जाना जा सकता है।

''श्रद्धान्वितत्त्वमसि इति बाम्यतो गुरोः प्रसादादपि शुद्धमानसः।

विज्ञाय चैकात्म्यमथात्मजीवयोः सुखी भवेन्मेरूरिवाप्रकम्पनः।।[11]

जीवात्मा एवं परमात्मा वस्तुतः एक हैं। यह दोनों पर्याय शब्द हैं। दोनों का अभिप्राय एक है। अतः इसमें भेदबुद्धि नहीं करनी चाहिए।

''जीवश्च परमात्मा च पर्यायो नात्र भेदधीः।

मानाभावस्तथा दम्भहिंसादि परिवर्जनम्।।[12]

इससे निष्कर्ष यही निकलता है कि परमात्मा और जीवात्मा दोनों ही शुद्धचेतन स्वरूप हैं। शुद्ध चेतन स्थूल, सूक्ष्म एवं कारण ये तीन उपाधियाँ हैं। इन उपाधियों से युक्त होने से वह जीव कहलाता है और रहित होने से परमेश्वर कहा जाता है।

स्थूलं सूक्ष्मं कारणाख्यमुपाधि त्रितयं चितेः।

एतैर्विशिष्टो जीवः स्याद्वियुक्तः परमेश्वरः।।

इस प्रकार उपर्युक्त तत्त्वों के वर्णन से यह दृष्टिगत होता है कि इन पर अद्वैत वेदान्त का पूर्णतः प्रभाव होते हुये सांख्य दर्शन का प्रभाव भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

उपर्युक्त दार्शनिक सिद्धांतों का आकलन करते समय एक कमी अवश्य लगती है कि सिद्धांतों का प्रतिपादन सर्वत्र बिना हेतु के ही प्रस्तुत किया गया है; किन्तु इस ग्रन्थ का लक्ष्य दार्शनिक समस्याओं को सिद्ध करना नहीं है यह तो भक्तिपरक ग्रन्थ है, भक्ति के माध्यम से सामान्यजनों में दार्शनिक तत्त्वों के निर्गलितार्थ का प्रतिपादन करना मात्र इसका लक्ष्य है। ग्रन्थ अपने लक्ष्य में सर्वथा सफल सशक्त एवं तेजोमय है।

---

1 अध्यात्मरामायण, अरण्यकाण्ड–3.20
2 अध्यात्मरामायण, बालकाण्ड–1.21
3 अध्यात्मरामायण, बालकाण्ड–1.1
4 अध्यात्मरामायण, बालकाण्ड–3.21
5 अध्यात्मरामायण, बालकाण्ड–7.32
6 अध्यात्मरामायण, बालकाण्ड–7.22
7 अध्यात्मरामायण, अरण्यकाण्ड–4.21, 22
8 अध्यात्मरामायण, बालकाण्ड–7.34
9 अध्यात्मरामायण, अयोध्याकाण्ड–4.38, 40
10 अध्यात्मरामायण, बालकाण्ड–1.46–48
11 अध्यात्मरामायण, उत्तरकाण्ड–5.24
12 अध्यात्मरामायण, अरण्यकाण्ड–4.31